Chapter एक

राजा सुद्युम्न का स्त्री बनना

इस अध्याय में यह वर्णन हुआ है कि सुद्युम्न किस प्रकार स्त्री बना और किस तरह से वैवस्वत मनु का वंश चन्द्र से उद्धृत सोमवंश में घुलमिल गया।

महाराज परीक्षित की इच्छानुसार शुकदेव गोस्वामी ने वैवस्वत मनु के वंश के विषय में बतलाया जो पूर्वकाल में द्रविड़ का राजा सत्यव्रत था। इस वंश का वर्णन करते हुए उन्होंने यह भी बतलाया कि किस प्रकार प्रलय-जल में लेटे हुए भगवान् ने अपनी नाभि से उत्पन्न कमल से ब्रह्माजी को जन्म दिया और ब्रह्माजी के मन से मरीचि उत्पन्न हुआ जिसका पुत्र कश्यप था। कश्यप को अदिति के गर्भ से विवस्वान की प्राप्ति हुई जिसकी पत्नी संज्ञा के गर्भ से श्राद्धदेव मनु उत्पन्न हुआ। श्राद्धदेव की पत्नी श्रद्धा ने दस पुत्रों को जन्म दिया, जिनमें इक्ष्वाकु तथा नृग प्रमुख थे।

श्राद्धदेव या वैवस्वत मनु महाराज इक्ष्वाकु के पिता थे। पहले वे सन्तानहीन थे, किन्तु वसिष्ठ मुनि की कृपा से उन्होंने मित्र तथा वरुण को प्रसन्न करने के लिए एक यज्ञ किया। यद्यपि वैवस्वत मनु पुत्ररत्न चाहते थे, किन्तु उनकी पत्नी की इच्छानुसार उन्हें इला नामक पुत्री प्राप्त हुई। अतएव मनु पुत्री-प्राप्ति से सन्तुष्ट नहीं थे। फलस्वरूप वसिष्ठ मुनि ने मनु की तुष्टि के लिए इला को एक बालक में परिणत करने के लिए प्रार्थना की जिसे भगवान् ने स्वीकार कर लिया। अत: इला एक सुन्दर युवक हो गई जिसका नाम सुद्युम्न रखा गया।

एक बार सुद्युम्न अपने मंत्रियों के साथ शिकार पर गया। सुमेरु पर्वत की तलहटी पर सुकुमार नामक एक बन है जिसमें प्रविष्ट होते ही सभी लोग स्त्रियों में परिणत हो गये। जब महाराज परीक्षित ने इसका कारण पूछा तो शुकदेव गोस्वामी ने बतलाया कि सुद्युम्न ने स्त्री बनने के बाद किस प्रकार चन्द्रमा के पुत्र बुध को अपने पति के रूप में स्वीकार किया जिससे उसे पुरूरवा नामक पुत्र की प्राप्ति हुई। शिवजी की कृपा से सुद्युम्न को यह वर मिला कि वह एक मास तक स्त्री और एक मास तक पुरुष के रूप में रहेगा। इस प्रकार उसे अपना राज्य पुन: प्राप्त हो गया और उसे उत्कल, गय तथा विमल नामक तीन पुत्र प्राप्त हुए और वे तीनों परम धार्मिक निकले। तत्पश्चात् उसने अपना राज्य पुरूरवा को सौंप दिया और स्वयं वानप्रस्थ

आश्रम में चला गया।

श्रीराजोवाच
मन्वन्तराणि सर्वाणि त्वयोक्तानि श्रुतानि मे ।
वीर्याण्यनन्तवीर्यस्य हरेस्तत्र कृतानि च ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-राजा उवाच—राजा परीक्षित ने कहा; मन्वन्तराणि—विभिन्न मनुओं के कालों के बारे में; सर्वाणि—समस्त; त्वया—तुम्हारे द्वारा; उक्तानि—वर्णन किये गये; श्रुतानि—सुने गये; मे—मेरे द्वारा; वीर्याणि—अद्भुत कार्यकलाप; अनन्त-वीर्यस्य—असीम बल वाले भगवान्; हरेः—हरि के; तत्र—उन मन्वन्तरों में; कृतानि—सम्पन्न; च—भी।

राजा परीक्षित ने कहा : हे प्रभु शुकदेव गोस्वामी, आप विभिन्न मनुओं के सारे कालों का विस्तार से वर्णन कर चुके हैं और उन कालों में असीम शक्तिशाली भगवान् के अद्भुत कार्यकलापों का भी वर्णन कर चुके हैं। मैं भाग्यशाली हूँ कि मैंने आपसे ये सारी बातें सुनीं।

योऽसौ सत्यव्रतो नाम राजर्षिर्द्रविडेश्वरः ।
ज्ञानं योऽतीतकल्पान्ते लेभे पुरुषसेवया ॥ २ ॥
स वै विवस्वतः पुत्रो मनुरासीदिति श्रुतम् ।
त्वत्तस्तस्य सुताः प्रोक्ता इक्ष्वाकुप्रमुखा नृपाः ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

यः असौ—जो विख्यात था; सत्यव्रतः—सत्यव्रत; नाम—नामक; राज-ऋषिः—साधु राजा; द्रविड-ईश्वरः—द्रविड देश का शासक; ज्ञानम्—ज्ञान; यः—जो; अतीत-कल्प-अन्ते—अन्तिम मनु के काल के अन्त में या गत कल्प के अन्त में; लेभे—प्राप्त किया; पुरुष-सेवया—भगवान् की सेवा करके; सः—उसने; वै—निस्सन्देह; विवस्वतः—विवस्वान का; पुत्रः—पुत्र; मनुः आसीत्—वैवस्वत मनु हुआ; इति—इस प्रकार; श्रुतम्—मैंने सुना है; त्वत्तः—तुमसे; तस्य—उसके; सुताः—पुत्र; प्रोक्ताः—बताये जा चुके हैं; इक्ष्वाकु-प्रमुखाः—इक्ष्वाकु इत्यादि; नृपाः—अनेक राजा।

द्रविड़ देश के साधु राजा सत्यव्रत को भगवत्कृपा से गत कल्प के अन्त में आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त हुआ और वह अगले मन्वन्तर में विवस्वान का पुत्र वैवस्वत मनु बना। मुझे इसका ज्ञान आपसे प्राप्त हुआ है। मैं यह भी जानता हूँ कि इक्ष्वाकु इत्यादि राजा उसके पुत्र थे जैसा कि आप पहले बता चुके हैं।

तेषां वंशं पृथग्ब्रह्मन्वंशानुचरितानि च ।
कीर्तयस्व महाभाग नित्यं शुश्रूषतां हि नः ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

तेषाम्—उन सारे राजाओं के; वंशम्—वंश को; पृथक्—अलग-अलग; ब्रह्मन्—हे महान् ब्राह्मण (शुकदेव गोस्वामी); वंश-अनुचरितानि च—तथा उनके वंश एवं गुण; कीर्तयस्व—कृपया कहिये; महा-भाग—हे परम भाग्यशाली; नित्यम्—नित्य; शुश्रूषताम्—आपकी सेवा में लगे हुओं का; हि—निस्सन्देह; नः—हम सबका।

हे परम भाग्यशाली शुकदेव गोस्वामी, हे महान् ब्राह्मण, कृपा करके हम सबको उन सारे राजाओं के वंशों तथा गुणों का पृथक्-पृथक् वर्णन कीजिये क्योंकि हम आपसे ऐसे विषयों को सुनने के लिए सदैव उत्सुक रहते हैं।

ये भूता ये भविष्याश्च भवन्त्यद्यतनाश्च ये ।
तेषां नः पुण्यकीर्तीनां सर्वेषां वद विक्रमान् ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

ये—जो; भूताः—पहले प्रकट हुए हैं; ये—जो; भविष्याः—भविष्य में उत्पन्न होंगे; च—भी; भवन्ति—विद्यमान हैं; अद्यतनाः—इस समय; च—भी; ये—जो; तेषाम्—उन सब का; नः—हमको; पुण्य-कीर्तीनाम्—जो पवित्र तथा प्रसिद्ध थे; सर्वेषाम्—सबका; वद—कृपा करके बतायें; विक्रमान्—पराक्रम के बारे में।

कृपा करके हमें वैवस्वत मनु के वंश में उत्पन्न उन समस्त विख्यात राजाओं के पराक्रम के विषय में बतलायें जो पहले हो चुके हैं, जो भविष्य में होंगे तथा जो इस समय विद्यमान हैं।

श्रीसूत उवाच
एवं परीक्षिता राज्ञा सदसि ब्रह्मवादिनाम् ।
पृष्टः प्रोवाच भगवाञ्छुकः परमधर्मवित् ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

श्री-सूतः उवाच—श्री सूत गोस्वामी ने कहा; एवम्—इस प्रकार; परीक्षिता—महाराज परीक्षित द्वारा; राज्ञा—राजा द्वारा; सदसि—सभा में; ब्रह्म-वादिनाम्—वैदिक ज्ञान में पटु सभी सन्त पुरुषों की; पृष्टः—पूछे जाकर; प्रोवाच—उत्तर दिया; भगवान्—अत्यन्त शक्तिमान; शुकः—शुक गोस्वामी; परम-धर्म-वित्—धर्म के महान् पंडित।

सूत गोस्वामी ने कहा : जब वैदिक ज्ञान के पंडितों की सभा में परम धर्मज्ञ शुकदेव गोस्वामी से महाराज परीक्षित ने इस प्रकार प्रार्थना की तो वे इस प्रकार बोले।

श्रीशुक उवाच
श्रूयतां मानवो वंशः प्राचुर्येण परन्तप ।
न शक्यते विस्तरतो वक्तुं वर्षशतैरपि ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा; श्रूयताम्—मुझसे सुनें; मानवः वंशः—मनु का वंश; प्राचुर्येण—विस्तार से; परन्तप—शत्रुओं का दमन करने वाले राजा; न—नहीं; शक्यते—समर्थ है; विस्तरतः—विस्तार से; वक्तुम्—कह पाना; वर्ष-शतैः अपि—सौ वर्षों में भी।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : हे शत्रुओं का दमन करने वाले राजा, अब तुम मुझसे मनु के वंश के विषय में विस्तार से सुनो। मैं यथासम्भव तुम्हें बतलाऊँगा यद्यपि सौ वर्षों में भी उसके विषय में पूरी तरह नहीं बतलाया जा सकता।

परावरेषां भूतानामात्मा यः पुरुषः परः ।
स एवासीदिदं विश्वं कल्पान्तेऽन्यन्न किञ्चन ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

पर-अवरेषाम्—जीवन के उच्च या निम्न स्तर के सारे जीवों का; भूतानाम्—भौतिक शरीर धारण करने वालों का (बद्धजीवों का); आत्मा—परमात्मा; यः—जो है; पुरुषः—परम पुरुष; परः—दिव्य; सः—वह; एव—निस्सन्देह; आसीत्—था; इदम्—यह; विश्वम्—ब्रह्माण्ड; कल्प-अन्ते—कल्प के अन्त में; अन्यत्—अन्यत्र; न—नहीं; किञ्चन—कुछ भी।

जीवन की उच्च तथा निम्न अवस्थाओं में पाये जाने वाले जीवों के परमात्मा दिव्य परम पुरुष कल्प के अन्त में विद्यमान थे जब न तो यह ब्रह्माण्ड था, न अन्य कुछ था। केवल वे ही विद्यमान थे।

तात्पर्य : मनु के वंश को कहाँ से प्रारम्भ किया जाय, इस दृष्टि से शुकदेव गोस्वामी यह कहते हुए प्रारम्भ करते हैं कि जब सारा विश्व जलमग्न हो जाता है तो केवल भगवान् विद्यमान रहते हैं, उनके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं रहता। अब शुकदेव गोस्वामी यह बतायेंगे कि भगवान् एक-एक करके अन्य वस्तुओं को किस तरह उत्पन्न करते हैं।

तस्य नाभेः समभवत्पद्मकोषो हिरण्मयः ।
तस्मिञ्जज्ञे महाराज स्वयम्भूश्चतुराननः ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

तस्य—उसकी (भगवान् की); नाभेः—नाभि से; समभवत्—उत्पन्न हुआ; पद्म-कोषः—कमल; हिरण्मयः—सुनहला या हिरण्मय नामक; तस्मिन्—उस सुनहले कमल पर; जज्ञे—प्रकट हुआ; महाराज—हे राजा; स्वयम्भूः—माता के बिना उत्पन्न होने वाला, या अपने आप प्रकट होने वाला; चतुः-आननः—चार मुखों वाला।

हे राजा परीक्षित, भगवान् की नाभि से एक सुनहला कमल उत्पन्न हुआ जिस पर चार मुखों वाले ब्रह्माजी ने जन्म लिया।

मरीचिर्मनसस्तस्य जज्ञे तस्यापि कश्यपः ।
दाक्षायण्यां ततोऽदित्यां विवस्वानभवत्सुतः ॥ १० ॥

शब्दार्थ

मरीचिः—मरीचि नामक महान् सन्त ने; मनसः तस्य—ब्रह्माजी के मन से; जज्ञे—जन्म लिया; तस्य अपि—मरीचि से; कश्यपः—कश्यप ने (जन्म लिया); दाक्षायण्याम्—महाराज दक्ष की कन्या के गर्भ से; ततः—तत्पश्चात्; अदित्याम्—अदिति के गर्भ से; विवस्वान्—विवस्वान; अभवत्—हुआ; सुतः—पुत्र।

ब्रह्माजी के मन से मरीचि ने जन्म लिया और मरीचि के वीर्य तथा दक्ष महाराज की कन्या के गर्भ से कश्यप प्रकट हुए। कश्यप द्वारा अदिति के गर्भ से विवस्वान ने जन्म लिया।

ततो मनुः श्राद्धदेवः संज्ञायामास भारत ।
श्रद्धायां जनयामास दश पुत्रान्स आत्मवान् ॥ ११ ॥
इक्ष्वाकुनृगशर्यातिदिष्टधृष्टकरूषकान् ।
नरिष्यन्तं पृषध्रं च नभगं च कविं विभुः ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

ततः—विवस्वान से; मनुः श्राद्धदेवः—श्राद्धदेव नामक मनु ने; संज्ञायाम्—विवस्वान की पत्नी संज्ञा के गर्भ से; आस—उत्पन्न हुआ; भारत—हे भारत वंश में श्रेष्ठ; श्रद्धायाम्—श्राद्धदेव की पत्नी श्रद्धा के गर्भ से; जनयाम् आस—जन्म दिया; दश—दस; पुत्रान्—पुत्रों को; सः—श्राद्धदेव ने; आत्मवान्—इन्द्रियों को जीतकर; इक्ष्वाकु-नृग-शर्याति-दिष्ट-धृष्ट-करूषकान्—इक्ष्वाकु, नृग, शर्याति, दिष्ट, धृष्ट तथा करूषक को; नरिष्यन्तम्—नरिष्यन्त; पृषध्रम् च—तथा पृषध्र; नभगम् च—तथा नभग; कविम्—कवि को; विभुः—महान।

हे भारतवंश के श्रेष्ठ राजा, संज्ञा के गर्भ से विवस्वान को श्राद्धदेव मनु प्राप्त हुए। श्राद्धदेव मनु ने अपनी इन्द्रियों को जीत लिया था। उन्हें अपनी पत्नी श्रद्धा के गर्भ से दस पुत्र प्राप्त हुए। इन पुत्रों के नाम थे—इक्ष्वाकु, नृग, शर्याति, दिष्ट, धृष्ट, करूषक, नरिष्यन्त, पृषध्र, नभग तथा कवि।

अप्रजस्य मनोः पूर्वं वसिष्ठो भगवान्किल ।
मित्रावरुणयोरिष्टिं प्रजार्थमकरोद्विभुः ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

अप्रजस्य—निःसन्तान; मनोः—मनु के; पूर्वम्—पहले; वसिष्ठः—मुनि वसिष्ठ; भगवान्—शक्तिशाली; किल—निस्सन्देह; मित्रा-वरुणयोः—मित्र तथा वरुण नामक देवताओं का; इष्टिम्—यज्ञ; प्रजा-अर्थम्—पुत्र प्राप्ति के लिए; अकरोत्—सम्पन्न किया; विभुः—महापुरुष ने।

आरम्भ में मनु के एक भी पुत्र नहीं था। अतएव उसे पुत्रप्राप्ति के लिए आध्यात्मिक ज्ञान में अत्यन्त शक्तिशाली मुनि वसिष्ठ ने मित्र तथा वरुण देवताओं को प्रसन्न करने के लिए एक यज्ञ सम्पन्न किया।

तत्र श्रद्धा मनोः पत्नी होतारं समयाचत ।
दुहित्रर्थमुपागम्य प्रणिपत्य पयोव्रता ॥ १४ ॥

शब्दार्थ

तत्र—उस यज्ञ में; श्रद्धा—श्रद्धा ने; मनोः—मनु की; पत्नी—पत्नी; होतारम्—यज्ञ करने वाले पुरोहित से; समयाचत—ठीक से भीख माँगी; दुहितृ-अर्थम्—एक पुत्री के लिए; उपागम्य—पास आकर; प्रणिपत्य—प्रणाम करके; पयः-व्रता—पयोव्रत करने वाली, केवल दूध पीने का व्रत रखने वाली।

उस यज्ञ के दौरान मनु की पत्नी श्रद्धा, जो केवल दूध पीकर जीवित रहने का व्रत कर रही थी, यज्ञ कराने वाले पुरोहित के निकट आई, उसे प्रणाम किया और उससे एक पुत्री की याचना की।

प्रेषितोऽध्वर्युणा होता व्यचरत्तत्समाहितः ।
गृहीते हविषि वाचा वषट्कारं गृणन्द्विजः ॥ १५ ॥

शब्दार्थ

प्रेषितः—यज्ञ करने को कहे जाने पर; अध्वर्युणा—ऋत्विक द्वारा; होता—आहुति डालने वाले पुरोहित ने; व्यचरत्—सम्पन्न किया; तत्—वह (यज्ञ); समाहितः—ध्यानपूर्वक; गृहीते हविषि—पहली आहुति के लिए घी लेने पर; वाचा—मंत्रोच्चार द्वारा; वषट्-कारम्—वषट् शब्द से प्रारम्भ होने वाले मंत्र को; गृणन्—उच्चारण करते हुए; द्विजः—ब्राह्मण ने।

प्रधान पुरोहित द्वारा यह कहे जाने पर ''अब आहुति डालो'' आहुति डालने वाले (होता) ने आहुति डालने के लिए घी लिया। तब उसे मनु की पत्नी की याचना स्मरण हो आई और उसने 'वषट्' शब्दोच्चार करते हुए यज्ञ सम्पन्न किया।

होतुस्तद्व्यभिचारेण कन्येला नाम साभवत् ।
तां विलोक्य मनुः प्राह नातितुष्टमना गुरुम् ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

होतुः—पुरोहित के; तत्—यज्ञ के; व्यभिचारेण—उल्लंघनपूर्ण कर्म से; कन्या—पुत्री; इला—इला; नाम—नामक; सा—वह कन्या; अभवत्—उत्पन्न हुई; ताम्—उसको; विलोक्य—देखकर; मनुः—मनु; प्राह—बोला; न—नहीं; अतितुष्टमनाः—अत्यधिक तुष्ट; गुरुम्—अपने गुरु से।

मनु ने वह यज्ञ पुत्रप्राप्ति के लिए प्रारम्भ किया था, किन्तु मनु की पत्नी के अनुरोध पर पुरोहित के विपथ होने से इला नाम की एक कन्या उत्पन्न हुई। इस पुत्री को देखकर मनु बिल्कुल प्रसन्न नहीं हुए। अतएव वे अपने गुरु वसिष्ठ से इस प्रकार बोले।

तात्पर्य : चूँकि मनु के कोई सन्तान न थी अतएव वे सन्तान के जन्म लेने पर प्रसन्न हुए, यद्यपि वह कन्या थी और उन्होंने उसका नाम इला रखा। किन्तु बाद में वे पुत्र के बजाय पुत्री को पाकर अधिक संतुष्ट नहीं थे। चूँकि वे निःसन्तान थे अतएव इला के जन्म पर अत्यन्त प्रसन्न तो थे लेकिन उनका हर्ष क्षणिक था।

भगवन्किमिदं जातं कर्म वो ब्रह्मवादिनाम् ।
विपर्ययमहो कष्टं मैवं स्याद्ब्रह्मविक्रिया ॥ १७॥

शब्दार्थ

भगवन्—हे प्रभु; किम् इदम्—यह क्या है; जातम्—उत्पन्न हुआ; कर्म—सकाम कर्म; वः—हम सभी; ब्रह्म-वादिनाम्—वैदिक मंत्रों के उच्चारण में पटु आप लोगों का; विपर्ययम्—विचलन; अहो—ओह; कष्टम्—कष्टप्रद; मा एवम् स्यात्—इस तरह नहीं होना चाहिए था; ब्रह्म-विक्रिया—वेद मंत्रों का यह विपरीत प्रभाव।

हे प्रभु, आप लोग वैदिक मंत्रों के उच्चारण में पटु हैं। तो फिर वांछित फल से विपरीत फल क्यों निकला? यही पश्चात्ताप का विषय है। वैदिक मंत्रों का ऐसा उल्टा प्रभाव नहीं होना चाहिए था।

तात्पर्य : इस युग में यज्ञ करना मना है क्योंकि कोई भी व्यक्ति वेद-मंत्रों का ठीक से उच्चारण नहीं कर सकता। यदि वैदिक मंत्रों का ठीक से उच्चारण किया जाय तो जिस इच्छा से यज्ञ किया जाता है उसकी पूर्ति अवश्य होती है। इसीलिए हरे कृष्ण उच्चारण महामंत्र कहलाता है जो अन्य समस्त वैदिक मंत्रों से बढ़ चढ़ कर है क्योंकि हरे कृष्ण महामंत्र के उच्चारण मात्र से अनेक लाभ होते हैं। जैसा कि श्रीचैतन्य महाप्रभु ने बतलाया है (शिक्षाष्टक१)—

चेतोदर्पणमार्जनं भवमहादावाग्निनिर्वापनं
श्रेय:कैरवचन्द्रिकावितरणं विद्यावधूजीवनम्।
आनन्दाम्बुधिवर्धनं प्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनं
सर्वात्मस्नपनं परं विजयते श्रीकृष्णसंकीर्तनम्॥

''श्रीकृष्ण संकीर्तन की जय हो जो वर्षों से हृदय में जमी धूल को स्वच्छ करता है और बार-बार जन्म-मरण के बद्धजीवन की अग्नि को शमन करता है। यह संकीर्तन आंदोलन मानवता के लिए मूल वरदान है क्योंकि यह वरदान रूपी चन्द्रमा की किरणों को बिखेरता है। यह समस्त दिव्य ज्ञान का जीवन है। यह दिव्य आनन्द के सागर को बढ़ाता है और हमें उस अमृत को चखने में समर्थ बनाता है जिसके लिए हम सभी सदैव लालायित रहते हैं।''

अतएव हमें जिस सर्वश्रेष्ठ यज्ञ को सम्पन्न करना है वह है *संकीर्तन यज्ञ। यज्ञै संकीर्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधस:* (*भागवत* ११.५.३२)। जो लोग बुद्धिमान हैं वे इस युग में हरे कृष्ण महामंत्र का सामूहिक कीर्तन करके महानतम यज्ञ का लाभ उठाते हैं। जब हरे कृष्ण मंत्र का कीर्तन कई पुरुष मिलकर करते हैं तो यह संकीर्तन कहलाता है। ऐसे यज्ञ के प्रभाव से आकाश में बादल आ जाएँगे (*यज्ञाद् भवति पर्जन्य:*)। दुर्भिक्ष

के इन दिनों में मात्र हरे कृष्ण यज्ञ की विधि से लोग वर्षा तथा अन्न के अभाव से छुटकारा पा सकते हैं। निस्सन्देह इससे सारे मानव समाज को राहत मिल सकती है। अधुना सारे यूरोप तथा अमेरिका में दुर्भिक्ष है और लोग कष्ट उठा रहे हैं, किन्तु यदि लोग इस कृष्णभावनामृत आन्दोलन को गम्भीरतापूर्वक ग्रहण करें, यदि वे अपने पापकर्म बन्द कर दें और हरे कृष्ण महामंत्र का कीर्तन करें तो उनकी सारी समस्याएँ आसानी से सुलझ जायँ। यज्ञ की अन्य विधियों में तरह-तरह की कठिनाइयाँ आती हैं क्योंकि न तो ऐसे पण्डित हैं जो मंत्रों का ठीक से उच्चारण कर सकें, न ही यज्ञ सम्पन्न करने की सामग्री प्राप्त कर पाना सम्भव है। चूँकि मानव समाज दरिद्र है और लोग वैदिक ज्ञान एवं वैदिक मंत्रों के उच्चारण करने की शक्ति से वंचित हैं अतएव हरे कृष्ण महामंत्र ही एकमात्र आश्रय है। लोगों को इसका कीर्तन करने की बुद्धिमानी बरतनी चाहिए। *यज्ञै संकीर्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधस:*। जिनके मस्तिष्क कुन्द हैं वे न तो इस कीर्तन को समझ सकते हैं, न ही इसे ग्रहण कर सकते हैं।

यूयं ब्रह्मविदो युक्तास्तपसा दग्धकिल्बिषाः ।
कुतः सङ्कल्पवैषम्यमनृतं विबुधेष्विव ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

यूयम्—तुम सभी; ब्रह्म-विदः—परम सत्य से भलीभाँति परिचित; युक्ताः—संयमित; तपसा—तपस्या के द्वारा; दग्ध-किल्बिषाः—जिनके सारे भौतिक कल्मष जल चुके हैं; कुतः—तब कैसे; सङ्कल्प-वैषम्यम्—संकल्प में त्रुटि; अनृतम्—झूठा वादा, झूठा कथन; विबुधेषु—देवताओं के समाज में; इव—अथवा।

तुम सभी संयमित, संतुलित तथा परम सत्य से परिचित हो। तुम सबने अपनी तपस्याओं के द्वारा सारे भौतिक कल्मष से अपने को पूरी तरह स्वच्छ कर लिया है। तुम सबके वचन देवताओं के वचनों की तरह कभी मिथ्या नहीं होते। तो फिर यह कैसे सम्भव हुआ कि तुम सबका संकल्प विफल हो गया?

तात्पर्य : अनेक वैदिक ग्रंथों से यह पता चलता है कि देवताओं द्वारा दिया गया वरदान या शाप कभी झूठा नहीं होता। तपस्या करने, इन्द्रियों तथा मन को संयमित करने एवं परम सत्य का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने से मनुष्य का सारा भौतिक कल्मष जाता रहता है। तब उसके वचन तथा आशीर्वाद देवताओं की तरह कभी विफल नहीं होते।

निशम्य तद्वचस्तस्य भगवान्प्रपितामहः ।
होतुर्व्यतिक्रमं ज्ञात्वा बभाषे रविनन्दनम् ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

निशम्य—सुनकर; तत् वचः—वे शब्द; तस्य—उसके (मनु के); भगवान्—अत्यन्त शक्तिशाली; प्रपितामहः—बाबा के बाबा वसिष्ठ; होतुः व्यतिक्रमम्—होता की त्रुटि; ज्ञात्वा—जानकर; बभाषे—बोला; रवि-नन्दनम्—सूर्यपुत्र वैवस्वत मनु से।

मनु के इन वचनों को सुनकर अत्यन्त शक्तिशाली प्रपितामह वसिष्ठ होता की त्रुटि को समझ गये। अतः वे सूर्यपुत्र से इस प्रकार बोले।

एतत्सङ्कल्पवैषम्यं होतुस्ते व्यभिचारतः ।
तथापि साधयिष्ये ते सुप्रजास्त्वं स्वतेजसा ॥ २० ॥

शब्दार्थ

एतत्—यह; सङ्कल्प-वैषम्यम्—लक्ष्य में त्रुटि; होतुः—होता की; ते—तुम्हारे; व्यभिचारतः—निर्दिष्ट प्रयोजन से हटने के कारण; तथा अपि—फिर भी; साधयिष्ये—मैं सम्पन्न करूँगा; ते—तुम्हारा; सु-प्रजास्त्वम्—अत्यन्त सुन्दर पुत्र; स्व-तेजसा—अपने निजी पराक्रम से।

लक्ष्य में यह त्रुटि तुम्हारे पुरोहित द्वारा मूल उद्देश्य में विचलन के कारण हुई है। फिर भी मैं अपने पराक्रम से तुम्हें एक अच्छा पुत्र प्रदान करूँगा।

एवं व्यवसितो राजन्भगवान्स महायशाः ।
अस्तौषीदादिपुरुषमिलायाः पुंस्त्वकाम्यया ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; व्यवसितः—निश्चित करते हुए; राजन्—हे राजा परीक्षित; भगवान्—अत्यन्त शक्तिमान; सः—वसिष्ठ; महा-यशाः—अत्यन्त प्रसिद्ध; अस्तौषीत्—प्रार्थना की; आदि-पुरुषम्—परम पुरुष भगवान् विष्णु से; इलायाः—इला का; पुंस्त्व-काम्यया—पुरुष में परिणत करने के लिए।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : हे राजा परीक्षित, अत्यन्त प्रसिद्ध एवं शक्तिशाली वसिष्ठ ने यह निर्णय लेने के बाद परम पुरुष भगवान् विष्णु से इला को पुरुष में परिणत करने के लिए प्रार्थना की।

तस्मै कामवरं तुष्टो भगवान्हरिरीश्वरः ।
ददाविलाभवत्तेन सुद्युम्नः पुरुषर्षभः ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

तस्मै—उसको (वसिष्ठ को); काम-वरम्—इच्छित वरदान; तुष्टः—प्रसन्न होकर; भगवान्—भगवान्; हरिः ईश्वरः—परम नियन्ता भगवान् ने; ददौ—दिया; इला—इला नामक कन्या; अभवत्—हो गई; तेन—इस वरदान से; सुद्युम्नः—सुद्युम्न नामक; पुरुष-ऋषभः—सुन्दर पुरुष।

परम नियन्ता भगवान् ने वसिष्ठ से प्रसन्न होकर उन्हें इच्छित वरदान दिया। इस तरह इला सुद्युम्न नामक एक सुन्दर पुरुष में परिणत हो गई।

स एकदा महाराज विचरन्मृगयां वने ।
वृतः कतिपयामात्यैरश्वमारुह्य सैन्धवम् ॥ २३ ॥
प्रगृह्य रुचिरं चापं शरांश्च परमाद्भुतान् ।
दंशितोऽनुमृगं वीरो जगाम दिशमुत्तराम् ॥ २४ ॥

शब्दार्थ

सः—सुद्युम्न; एकदा—एक बार; महाराज—हे राजा परीक्षित; विचरन्—भ्रमण करते हुए; मृगयाम्—शिकार करने के लिए; वने—जंगल में; वृतः—साथ होकर; कतिपय—कुछ; अमात्यैः—मंत्रियों या पार्षदों के द्वारा; अश्वम्—घोड़े पर; आरुह्य—चढ़कर; सैन्धवम्—सिन्धु प्रदेश में उत्पन्न; प्रगृह्य—हाथ में पकड़कर; रुचिरम्—सुन्दर; चापम्—धनुष; शरान् च—तथा बाण; परम-अद्भुतान्—अत्यन्त अद्भुत, असामान्य; दंशितः—कवच धारण किये; अनुमृगम्—पशुओं के पीछे; वीरः—वीर; जगाम—गया; दिशम् उत्तराम्—उत्तर दिशा की ओर।

हे राजा परीक्षित, एक बार वीर सुद्युम्न अपने कुछ मंत्रियों के साथ सिन्धुप्रदेश से लाये गये घोड़े पर चढ़कर शिकार करने के लिए जंगल में गया। वह कवच पहने था और धनुष-बाण से सुशोभित था। वह अत्यन्त सुन्दर था। वह पशुओं का पीछा करते तथा उनको मारते हुए जंगल के उत्तरी भाग में पहुँच गया।

सुकुमारवनं मेरोरधस्तात्प्रविवेश ह ।
यत्रास्ते भगवाञ्छर्वो रममाणः सहोमया ॥ २५ ॥

शब्दार्थ

सुकुमार-वनम्—सुकुमार नामक वन में; मेरोः अधस्तात्—मेरु पर्वत की तलहटी में; प्रविवेश ह—प्रविष्ट हुआ; यत्र—जहाँ; आस्ते—था; भगवान्—अत्यन्त शक्तिशाली (देवता); शर्वः—शिवजी; रममाणः—रमण में तल्लीन; सह उमया—अपनी पत्नी उमा के साथ।

वहाँ उत्तर में मेरु पर्वत की तलहटी में सुकुमार नामक एक वन है जहाँ शिवजी सदैव उमा के साथ विहार करते हैं। सुद्युम्न उसी वन में प्रविष्ट हुआ।

तस्मिन्प्रविष्ट एवासौ सुद्युम्नः परवीरहा ।
अपश्यत्स्त्रियमात्मानमश्वं च वडवां नृप ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

तस्मिन्—उस वन में; प्रविष्टः—प्रविष्ट होने पर; एव—निस्सन्देह; असौ—वह; सुद्युम्नः—राजकुमार सुद्युम्न; पर-वीर-हा—अपने शत्रुओं को दमन करने वाले; अपश्यत्—देखा; स्त्रियम्—स्त्री; आत्मानम्—अपनेआपको; अश्वम् च—तथा अपने घोड़े को; वडवाम्—घोड़ी में; नृप—हे राजा परीक्षित।

हे राजा परीक्षित, ज्यों ही अपने शत्रुओं को दमन करने में निपुण सुद्युम्न उस जंगल में प्रविष्ट हुआ त्यों ही उसने देखा कि वह एक स्त्री में और उसका घोड़ा एक घोड़ी में परिणत हो गया है।

तथा तदनुगाः सर्वे आत्मलिङ्गविपर्ययम् ।
दृष्ट्वा विमनसोऽभूवन्वीक्षमाणाः परस्परम् ॥ २७॥

शब्दार्थ

तथा—उसी तरह; तत्-अनुगाः—सुद्युम्न के साथी; सर्वे—सारे; आत्म-लिङ्ग-विपर्ययम्—विपरीत लिंग में रूपान्तर; दृष्ट्वा—देखकर; विमनसः—खिन्न; अभूवन्—वे हो गये; वीक्षमाणाः—देखते हुए; परस्परम्—एक दूसरे को।

जब उसके साथियों ने भी अपने स्वरूपों एवं अपने लिंग को विपर्यस्त देखा तो वे सभी अत्यन्त खिन्न हो उठे और एक दूसरे की ओर देखने लगे।

श्रीराजोवाच
कथमेवं गुणो देशः केन वा भगवन्कृतः ।
प्रश्नमेनं समाचक्ष्व परं कौतूहलं हि नः ॥ २८॥

शब्दार्थ

श्री-राजा उवाच—महाराज परीक्षित ने कहा; कथम्—कैसे; एवम्—यह; गुणः—गुण; देशः—देश; केन—क्यों; वा—अथवा; भगवन्—हे शक्तिशाली; कृतः—किया गया; प्रश्नम्—प्रश्न; एनम्—यह; समाचक्ष्व—बतलाइये; परम्—अत्यधिक; कौतूहलम्—उत्सुकता; हि—निस्सन्देह; नः—हमारी।

महाराज परीक्षित ने कहा : हे परम शक्तिशाली ब्राह्मण, यह स्थान इतना शक्तिवान क्यों था और इसे किसने इतना शक्तिशाली बनाया था? कृपा करके इस प्रश्न का उत्तर दीजिये क्योंकि मैं इसके विषय में जानने के लिए अत्यधिक उत्सुक हूँ।

श्रीशुक उवाच
एकदा गिरिशं द्रष्टुमृषयस्तत्र सुव्रताः ।
दिशो वितिमिराभासाः कुर्वन्तः समुपागमन् ॥ २९॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा; एकदा—एक बार; गिरिशम्—शिवजी को; द्रष्टुम्—देखने के लिए; ऋषयः—ऋषिगण; तत्र—उस जंगल में; सु-व्रताः—आध्यात्मिक शक्ति में अत्यन्त बढ़े-चढ़े; दिशः—सारी दिशाएँ; वितिमिर-आभासाः—सारे अंधकार के साफ हो जाने पर; कुर्वन्तः—करते हुए; समुपागमन्—आये।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : एक बार आध्यात्मिक अनुष्ठानों का कठोरता से पालन करने वाले बड़े-बड़े साधु पुरुष उस जंगल में शिवजी का दर्शन करने आये। उन सबके तेज से सारी दिशाओं

का सारा अंधकार दूर हो गया।

तान्विलोक्याम्बिका देवी विवासा व्रीडिता भृशम् ।
भर्तुरङ्कात्समुत्थाय नीवीमाश्वथ पर्यधात् ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

तान्—उन साधुपुरुषों को; विलोक्य—देखकर; अम्बिका—माता दुर्गा; देवी—देवी; विवासा—नग्न होने के कारण; व्रीडिता—लज्जित; भृशम्—अत्यधिक; भर्तुः—अपने पति की; अङ्कात्—गोद से; समुत्थाय—उठकर; नीवीम्—वक्षस्थल; आशु अथ—तुरन्त ही; पर्यधात्—वस्त्र से ढक लिया।

जब देवी अम्बिका ने इन साधु पुरुषों को देखा तो वे अत्यधिक लज्जित हुईं क्योंकि उस समय वे नग्न थीं। वे तुरन्त अपने पति की गोद से उठ गईं और अपने वक्षस्थल को ढकने का प्रयास करने लगीं।

ऋषयोऽपि तयोर्वीक्ष्य प्रसङ्गं रममाणयोः ।
निवृत्ताः प्रययुस्तस्मान्नरनारायणाश्रमम् ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

ऋषयः—सारे साधु पुरुष; अपि—भी; तयोः—उन दोनों की; वीक्ष्य—देखकर; प्रसङ्गम्—रति क्रीड़ा में; रममाणयोः—लगे हुए; निवृत्ताः—आगे जाने से हिचके; प्रययुः—तुरन्त विदा हो गये; तस्मात्—उस स्थान से; नर-नारायण-आश्रमम्—नर नारायण के आश्रम को।

शिवजी तथा पार्वती को काम-क्रीड़ा में संलग्न देखकर सारे साधु पुरुष तुरन्त ही आगे जाने से रुक गये और उन्होंने नर-नारायण के आश्रम के लिए प्रस्थान किया।

तदिदं भगवानाह प्रियायाः प्रियकाम्यया ।
स्थानं यः प्रविशेदेतत्स वै योषिद्भवेदिति ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

तत्—क्योंकि; इदम्—यह; भगवान्—शिवजी ने; आह—कहा; प्रियायाः—अपनी प्रिय पत्नी के; प्रिय-काम्यया—आनन्द के लिए; स्थानम्—स्थान; यः—जो कोई; प्रविशेत्—प्रवेश करेगा; एतत्—यहाँ; सः—वह व्यक्ति; वै—निस्सन्देह; योषित्—स्त्री; भवेत्—हो जायेगा; इति—इस प्रकार।

तत्पश्चात् अपनी पत्नी को प्रसन्न करने के लिए शिवजी ने कहा, ''इस स्थान में प्रवेश करते ही पुरुष तुरन्त स्त्री बन जायेगा।''

तत ऊर्ध्वं वनं तद्वै पुरुषा वर्जयन्ति हि ।

सा चानुचरसंयुक्ता विचचार वनाद्वनम् ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

ततः ऊर्ध्वम्—उस समय के बाद से; वनम्—जंगल में; तत्—उस; वै—विशेष रूप से; पुरुषाः—पुरुष-गण; वर्जयन्ति—नहीं प्रवेश करते; हि—निस्सन्देह; सा—स्त्री रूप में सुद्युम्न; च—भी; अनुचर-संयुक्ता—अपने साथियों के साथ; विचचार—घूमने गया; वनात् वनम्—एक जंगल से दूसरे में।

उस काल से कोई भी पुरुष उस जंगल में नहीं घुसा। किन्तु अब स्त्री रूप में परिणत होकर राजा सुद्युम्न अपने साथियों समेत एक जंगल से दूसरे जंगल में घूमने लगा।

तात्पर्य : *भगवद्गीता* (२.२२) में कहा गया है—

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय

नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।

तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्य-

न्यानि संयाति नवानि देही॥

"जिस प्रकार मनुष्य अपने पुराने वस्त्रों को त्यागकर नये वस्त्र धारण करता है उसी प्रकार आत्मा पुराने तथा व्यर्थ के शरीरों को त्यागकर नवीन देहें धारण करता है।"

यह शरीर वस्त्र की भाँति है और यहाँ पर इसे सिद्ध किया गया है। सुद्युम्न तथा उसके साथी नर (पुरुष) थे जिसका अर्थ है कि उनकी आत्माएँ नर वस्त्र से ढकी थीं, किन्तु अब वे स्त्रियाँ हो गई थीं जिसका अर्थ है कि उनका वस्त्र बदला था, किन्तु आत्मा वही रही। कहा जाता है कि आधुनिक चिकित्सा से नर को नारी में और नारी को नर में परिणत किया जा सकता है। किन्तु शरीर का आत्मा से कोई सम्बन्ध नहीं रहता। शरीर तो इसी जीवन में या अगले जीवन में बदला जा सकता है। अतएव जिस व्यक्ति को आत्मा का और एक शरीर से दूसरे शरीर में आत्मा के देहान्तरण का ज्ञान है वह वस्त्ररूपी शरीर के प्रति कोई ध्यान नहीं देता। *पण्डिताः समदर्शिनः*। ऐसा व्यक्ति परमात्मा के अंश स्वरूप आत्मा का दर्शन करता है। इसीलिए वह समदर्शी अर्थात् विद्वान व्यक्ति है।

अथ तामाश्रमाभ्याशे चरन्तीं प्रमदोत्तमाम् ।
स्त्रीभिः परिवृतां वीक्ष्य चकमे भगवान्बुधः ॥ ३४॥

शब्दार्थ

अथ—इस तरह; ताम्—उसको; आश्रम-अभ्याशे—अपने आश्रम के निकट; चरन्तीम्—विचरण करती; प्रमदा-उत्तमाम्—कामोत्तेजना को जागृत करने वाली श्रेष्ठ सुन्दरी; स्त्रीभिः—अन्य स्त्रियों द्वारा; परिवृताम्—घिरी हुई; वीक्ष्य—देखकर; चकमे—कामेच्छा की; भगवान्—अत्यन्त शक्तिशाली; बुधः—चन्द्रमा का पुत्र बुध तथा बुधलोक का प्रधान देवता।

सुद्युम्न परम सुन्दर स्त्री में परिणत कर दिया गया था जो कामेच्छा को जगाने वाली थी और अन्य स्त्रियों से घिरी हुई थी। चन्द्रमा के पुत्र बुध ने इस सुन्दरी को अपने आश्रम के निकट विचरण करते देखकर उसके साथ संभोग करने की इच्छा प्रकट की।

सापि तं चकमे सुभ्रूः सोमराजसुतं पतिम् ।
स तस्यां जनयामास पुरूरवसमात्मजम् ॥ ३५ ॥

शब्दार्थ

सा—सुद्युम्न जो स्त्री के रूप में था; अपि—भी; तम्—उसके साथ (बुध के साथ); चकमे—संभोग करना चाहा; सु-भ्रूः—परम सुन्दरी; सोमराज-सुतम्—चन्द्रमा के राजकुमार के साथ; पतिम्—अपने पति रूप में; सः—वह (बुध); तस्याम्—उसके गर्भ से; जनयाम् आस—उत्पन्न किया; पुरूरवसम्—पुरूरवा नामक; आत्म-जम्—पुत्र को।

उस सुन्दर स्त्री ने भी चन्द्रमा के राजकुमार बुध को अपना पति बनाना चाहा। इस तरह बुध ने उसके गर्भ से पुरूरवा नामक एक पुत्र उत्पन्न किया।

एवं स्त्रीत्वमनुप्राप्तः सुद्युम्नो मानवो नृपः ।
सस्मार स कुलाचार्यं वसिष्ठमिति शुश्रुम ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ

एवम्—इस तरह; स्त्रीत्वम्—स्त्रीत्व; अनुप्राप्तः—प्राप्त करके; सुद्युम्नः—सुद्युम्न नामक पुरुष ने; मानवः—मनु पुत्र; नृपः—राजा ने; सस्मार—स्मरण किया; सः—उसने; कुल-आचार्यम्—कुलगुरु को; वसिष्ठम्—अत्यन्त शक्तिशाली वसिष्ठ; इति शुश्रुम—ऐसा मैंने (विश्वस्त सूत्रों से) सुना है।

मैंने विश्वस्त सूत्रों से सुना है कि मनु-पुत्र सुद्युम्न ने इस प्रकार स्त्रीत्व प्राप्त करके अपने कुलगुरु वसिष्ठ का स्मरण किया।

स तस्य तां दशां दृष्ट्वा कृपया भृशपीडितः ।
सुद्युम्नस्याशयन्पुंस्त्वमुपाधावत शङ्करम् ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ

सः—वह; तस्य—सुद्युम्न की; ताम्—उस; दशाम्—दशा को; दृष्ट्वा—देखकर; कृपया—कृपा करके; भृश-पीडितः—अत्यधिक दुखी; सुद्युम्नस्य—सुद्युम्न की; आशयन्—इच्छा; पुंस्त्वम्—पुरुषत्व; उपाधावत—पूजा करने लगा; शङ्करम्—शिवजी को।

सुद्युम्न की इस शोचनीय स्थिति को देखकर वसिष्ठ अत्यधिक दुखी हुए। उन्होंने सुद्युम्न को उसका पुरुषत्व वापस दिलाने की इच्छा से शिवजी की पूजा करनी फिर प्रारम्भ कर दी।

तुष्टस्तस्मै स भगवानृषये प्रियमावहन् ।
स्वां च वाचमृतां कुर्वन्निदमाह विशाम्पते ॥ ३८ ॥
मासं पुमान्स भविता मासं स्त्री तव गोत्रजः ।
इत्थं व्यवस्थया कामं सुद्युम्नोऽवतु मेदिनीम् ॥ ३९ ॥

शब्दार्थ

तुष्टः—प्रसन्न होकर; तस्मै—वसिष्ठ को; सः—उसने (शिवजी ने); भगवान्—अत्यन्त शक्तिशाली; ऋषये—ऋषि को; प्रियम् आवहन्—उसे प्रसन्न करने के लिए; स्वाम् च—अपने; वाचम्—शब्द को; ऋताम्—सत्य; कुर्वन्—करने के लिए; इदम्—यह; आह—कहा; विशाम्पते—हे राजा परीक्षित; मासम्—एक महीना; पुमान्—पुरुष; सः—सुद्युम्न; भविता—बन जायेगा; मासम्—दूसरे महीने में; स्त्री—स्त्री; तव—तुम्हारी; गोत्र-जः—तुम्हारी परम्परा में उत्पन्न शिष्य; इत्थम्—इस तरह; व्यवस्थया—समझौते से; कामम्—इच्छानुसार; सुद्युम्नः—राजा सुद्युम्न; अवतु—शासन कर सकता है; मेदिनीम्—जगत पर।

हे राजा परीक्षित, शिवजी वसिष्ठ पर प्रसन्न हो गए। अतएव शिवजी ने उन्हें तुष्ट करने तथा पार्वती को दिये गये अपने वचन रखने के उद्देश्य से उस सन्त पुरुष से कहा, ''आपका शिष्य सुद्युम्न एक मास तक नर रहेगा और दूसरे मास स्त्री रहेगा। इस तरह वह इच्छानुसार जगत पर शासन कर सकेगा।''

तात्पर्य : इस प्रसंग में *गोत्रजः* शब्द महत्त्वपूर्ण है। ब्राह्मण लोग सामान्यतया दो कुलों के गुरु होते हैं। एक कुल उनकी शिष्य परम्परा होता है और दूसरा उनके वीर्य से उत्पन्न कुल होता है। दोनों ही वंशज एक ही गोत्र से सम्बन्धित होते हैं। वैदिक प्रणाली में कभी-कभी देखा जाता है कि एक ही ऋषि की शिष्य-परम्परा में ब्राह्मण तथा क्षत्रिय दोनों पाये जाते हैं और कभी-कभी तो वैश्य तक पाये जाते हैं। चूँकि गोत्र तथा कुल एक हैं अतएव शिष्य तथा वीर्य से उत्पन्न कुल में कोई अन्तर नहीं होता। आज भी वही प्रणाली भारतीय समाज में चल रही है, विशेष रूप से विवाह में गोत्र की गणना की जाती है। यहाँ पर *गोत्रजः* शब्द एक ही कुल में उत्पन्न लोगों को बताने वाला है, चाहे वे शिष्य हों या कुल के सदस्य।

आचार्यानुग्रहात्कामं लब्ध्वा पुंस्त्वं व्यवस्थया ।
पालयामास जगतीं नाभ्यनन्दन्स्म तं प्रजाः ॥ ४० ॥

शब्दार्थ

आचार्य-अनुग्रहात्—गुरु की कृपा से; कामम्—इच्छित; लब्ध्वा—प्राप्त करके; पुंस्त्वम्—पुरुषत्व; व्यवस्थया—शिवजी के इस निर्णय से; पालयाम् आस—उसने शासन चलाया; जगतीम्—सारे जगत पर; न अभ्यनन्दन् स्म—संतुष्ट नहीं थे; तम्—उस राजा से; प्रजाः—नागरिक।

इस प्रकार गुरु की कृपा पाकर शिवजी के वचनों के अनुसार सुद्युम्न को प्रति दूसरे मास में

उसका इच्छित पुरुषत्व फिर से प्राप्त हो जाता था और इस तरह उसने राज्य पर शासन चलाया यद्यपि नागरिक इससे सन्तुष्ट नहीं थे।

तात्पर्य : नागरिक जान गये थे कि राजा हर दूसरे मास स्त्री में परिणत हो जाता है अतएव वह अपने राजसी कर्तव्यों को निभा नहीं सकता था। फलस्वरूप नागरिक अत्यधिक असन्तुष्ट थे।

तस्योत्कलो गयो राजन्विमलश्च त्रयः सुताः ।
दक्षिणापथराजानो बभूवुर्धर्मवत्सलाः ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ

तस्य—सुद्युम्न के; उत्कलः—उत्कल नामक; गयः—गय नामक; राजन्—हे राजा परीक्षित; विमलः च—तथा विमल नामक; त्रयः—तीन; सुताः—पुत्र; दक्षिणा-पथ—संसार के दक्षिणी भाग के; राजानः—राजागण; बभूवुः—वे बन गये; धर्म-वत्सलाः—अत्यन्त धार्मिक।

हे राजा, सुद्युम्न के तीन अत्यन्त पवित्र पुत्र हुए जिनके नाम थे उत्कल, गय तथा विमल, जो दक्षिणापथ के राजा बने।

ततः परिणते काले प्रतिष्ठानपतिः प्रभुः ।
पुरूरवस उत्सृज्य गां पुत्राय गतो वनम् ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ

ततः—तत्पश्चात्; परिणते काले—समय आने पर; प्रतिष्ठान-पतिः—राज्य का स्वामी; प्रभुः—अत्यन्त शक्तिशाली; पुरूरवसे—पुरूरवा को; उत्सृज्य—प्रदान करके; गाम्—जगत को; पुत्राय—अपने पुत्र को; गतः—चला गया; वनम्—वन को।

तत्पश्चात् समय आने पर जब जगत का राजा सुद्युम्न काफी वृद्ध हो गया तो उसने अपना सारा साम्राज्य अपने पुत्र पुरूरवा को दे दिया और स्वयं जंगल में चला गया।

तात्पर्य : वैदिक प्रणाली के अनुसार जब किसी की आयु पचास वर्ष हो जाय तो वह वर्णाश्रम संस्थान में रहता हुआ अपने पारिवारिक जीवन को अवश्य छोड़ दे (*पञ्चाशद् ऊर्ध्वं वनम् व्रजेत्*)। इस तरह सुद्युम्न ने अपना राजपाट छोड़कर आध्यात्मिक जीवन पूरा करने के लिए जंगल में जाकर वर्णाश्रम के निर्दिष्ट नियमों का पालन किया।

इस प्रकार *श्रीमद्भागवत* के नवम स्कन्ध के अन्तर्गत ''राजा सुद्युम्न का स्त्री बनना'' नामक पहले अध्याय के भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुए।